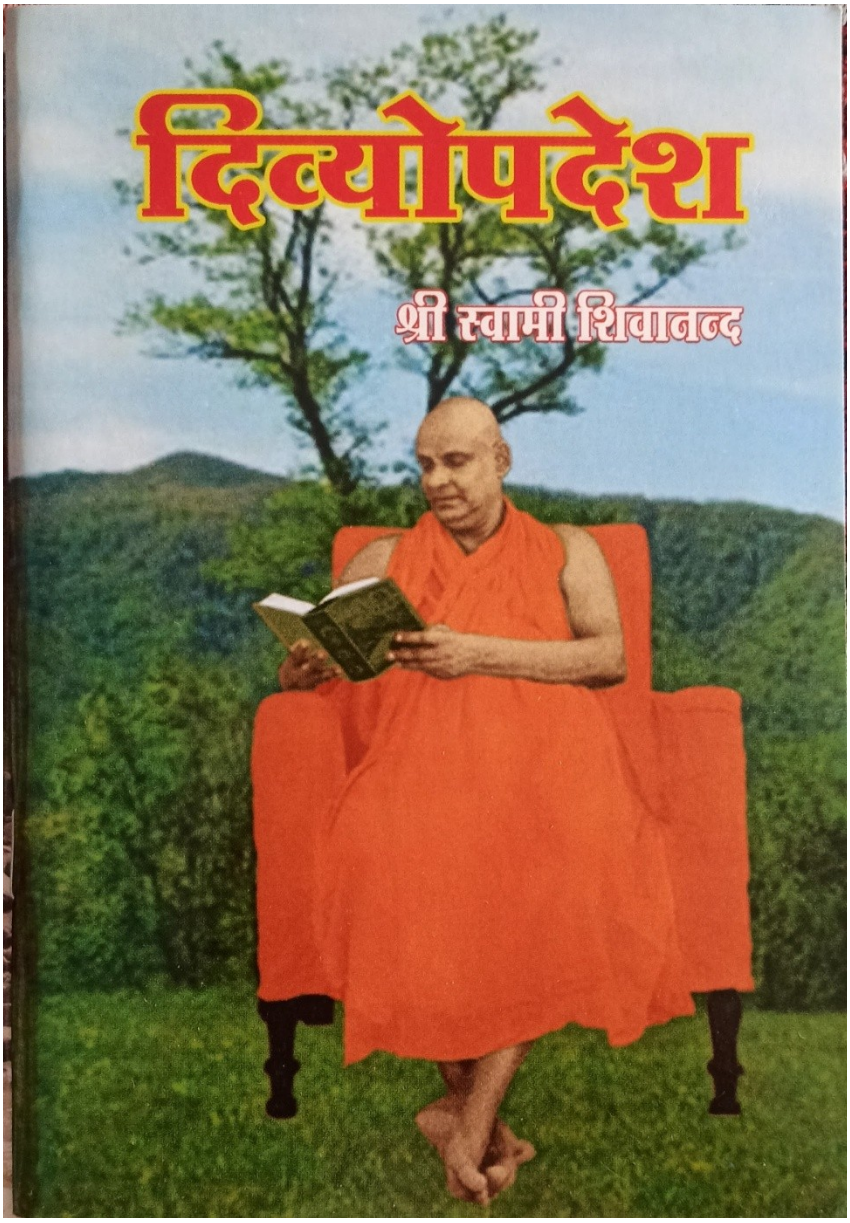
दिव्योपदेश
श्री स्वामी शिवानन्द

दिव्योपदेश

लेखक

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

अनुवादक

श्री ज्ञानेश्वर शास्त्री वर्मा

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगर-२४९ १९२

जिला : टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण : १९६५

द्वितीय हिन्दी संस्करण :१९७७

तृतीय हिन्दी संस्करण : १९८८

चतुर्थ हिन्दी संस्करण : १९९६
पंचम संस्करण :२००९
षष्ठ हिन्दी संस्करण :२०१६
सप्तम हिन्दी संस्करण : २०२२
(५०० प्रतियाँ)

© द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

ISBN 81-7052-116-5

HS 39

PRICE: 40/-

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर-२४९ १९२, जिला टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित ।
For online orders and Catalogue visit: dlsbooks.org

प्राक्कथन

इस जटिल विश्व में जीवन एक अबोध्य रहस्य है जो इस संसार तथा ईश्वर-दोनों को ही युगपत् स्पर्श करता है। जीवन का स्रोत है ईश्वर, और इसका प्रकटीकरण होता है इस नामरूपात्मक संसार में। जब मानव-जीवन का ईश्वर के साथ सचेतन सम्पर्क समाप्त हो जाता है तथा वह मूल-सत्ता से पृथक् हो जाता है, तब वह संसार-प्रक्रिया में फँस जाता है। इसके कुपरिणाम हैं-विपत्ति, दुःख, पीड़ा, शोक तथा वेदना । जब मानव-प्राणी ऐसी परिस्थिति से ग्रस्त हो जाते हैं

और ईश्वर के प्रति उनकी जागरूकता समाप्त हो जाती है, तब भगवत्कृपा तथा आत्मसाक्षात्कार-प्राप्त सन्त-महात्मा उन्हें इस बन्धनकारी परिस्थिति से मुक्त होने का उपाय बताते हैं, और उनके मूल-स्रोत से उनके आन्तरिक सम्पर्क को पुनर्स्थापित करते हैं। अपने आध्यात्मिक विस्मरण के कारण मानव-प्राणी जिस शान्ति और परमानन्द को खो बैठा है, उसे वे पुनः प्राप्त हो जाते हैं।

पूजनीय गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी एक प्रबुद्ध सन्त थे। बीसवीं शती में संसार ने मानव के मन को पूर्वापेक्ष अधिक प्रभावित किया है और उसके जीवन में ईश्वर के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ा है। ऐसे समय में पूजनीय गुरुदेव ने ईश्वर के साथ मानव के सम्बन्धों को पुनःस्थापित करने में सहायता प्रदान की है। 'दिव्योपदेश' उनके भौतिक जीवन की अन्तिम कृति है। इसका स्वाध्याय करके हमें दिव्य प्रज्ञा का वह
जीवन-प्रदायक अंश प्राप्त होता है, जिसकी सहायता से हम आध्यात्मिक रूप से पुनर्जीवित हो उठते हैं और पुनः परम तत्त्व से समस्वरित जीवन व्यतीत करने लगते हैं। यह कृति मानव-जाति के लिए प्रसारित एक महान् सन्त का अन्तिम सन्देश है जो मानवता के प्रति उनके असीम प्रेम से निःसृत हुआ है।

मैं कामना करता हूँ कि इस पुस्तिका का स्वाध्याय पाठकों को आन्तरिक प्रबोधन तथा वांछित सान्त्वना प्रदान करे।

- स्वामी चिदानन्द

दिव्योपदेश

प्रथम अध्याय

१. 'मैं शरीर हूँ' यह सोचना अविद्या है। 'मैं परम शुद्ध चैतन्य हूँ यह सोचना विद्या है।

२. जीवनोपयोगी दर्शन ही धर्म कहलाता है।

३. यह दुर्भाग्य की बात है कि हम आत्मिक स्वतन्त्रता का मूल्य चुका कर सांसारिक सुखों को खरीदते हैं।

४. आध्यात्मिक अभ्युत्थान के लिए दो ही सहायक तत्त्व हैं-सेवा और त्याग-भाव। ५. आत्मा को शब्दों की सीमा में बाँधा नहीं जा सकता। यह तो अनुभूतियों द्वारा गम्य है।

६. अपनी इच्छा पूरी करके कोई मनुष्य पूर्ण नहीं बन सकता- अपूर्णता और असन्तोष उसे सताते ही रहेंगे। इच्छा के विमोचन में ही सुख है।

७. अपने हृदय-क्षेत्र में भक्ति-भाव के बीज बोइए, इसे लगन से सीचिए। इसके चारों ओर सत्संग की बाड़ लगा दीजिए, जिससे कामादि विकारों के रूप में पशुओं का प्रवेश न हो सके। यदि आप ऐसा करेंगे, तो कालान्तर में शान्ति और आमोद की फसल आपके हाथ लगेगी।

८. क्या आप ईश्वर से तादात्म्य चाहते हैं? फिर तो आपको तृण की भाँति नम्र, शिशु की भाँति निर्दोष और गोपियों की भाँति अनुरक्त बनना पड़ेगा।

९. यदि आप ब्रह्म-साक्षात्कार करते हैं तो यह आपकी बौद्धिक खोज ही नहीं, आध्यात्मिक विजय भी मानी जायेगी।

१०. श्रद्धा के माध्यम से माया का वह आवरण हटा दीजिए जो ईश्वर पर छाया हुआ है। अब आप उनसे सम्पर्क स्थापित कीजिए और उनमें समा जाइए, यही आपका गन्तव्य रहे!

११. श्रद्धा के बिना की गयी प्रार्थना 'अरण्य-रोदन' है।

१२. सहृदयता से आप महान् बनते हैं, जब कि दानवता का दामन पकड़ कर आप पशुओं की कोटि में पहुँचते हैं।

१३. जब नाम और रूपों का नाटक खतम होता है, तब ब्रह्मविद्या का अवतरण होता है।

१४. अपने स्वरूप को पहचानें' - यही आपकी बुद्धिमत्ता है।

१५. जब आपमें दिव्य गुणों की श्रीवृद्धि होगी, तो मन वैषयिक सुखों से अपने-आप सिमट जायेगा।

१६. ईश्वर में सभी प्राणियों का समावेश है और सभी प्राणियों में ईश्वर का समावेश है।

१७. सूर्योदय के प्रकाश से जैसे फूलों की पंखुड़ियाँ उघड़ जाती हैं, वैसे ही आप ईश्वर के प्रकाश के समक्ष अपने हृदय की पंखुड़ियों को उघड़ जाने दीजिए।

१८. ज्ञानाग्नि में शुद्ध हो कर साधक परमात्म-पद को प्राप्त करता है।

१९. वासना की अग्नि आपके अन्तःकरण को विदग्ध करती है।

२०. आप अपनी प्रत्येक अनुभूति के साथ कुछ-न-कुछ विकास तो करते ही हैं।

२१. आपकी बाह्य परिस्थितियाँ भी आपके आन्तरिक अभ्युत्थान में सहायक होती हैं।

२२. आध्यात्मिक अभ्युत्थान के सोपान हैं क्रमशः कर्म, उपासना, ध्यान और साक्षात्कार।

२३. अनन्त जीवन-चक्र में 'मृत्यु' तो एक आवर्ती घटना है।

२४. सभी अच्छे विचार कालान्तर में अच्छे कर्मों को जन्म देते हैं।

२५. ईश्वर ही परम सुख का मूल है।

२६. धर्म ही श्रेष्ठ जीवन की कुंजी है।

२७. परमात्मा से तादात्म्य ही मानव-जीवन की मंजिल होनी चाहिए।

२८. शुभ कर्म की परिभाषा यही है कि हम इससे ईश्वर के प्रति उन्मुख हों।

२९. सत्य का साक्षात्कार ही ज्ञान है।

३०. राग, द्वेष और भय अविद्या से प्रसूत हैं।

३१. धर्म का उद्भव भय से होता है; लेकिन भक्ति और उपासना के बाद ईश्वर-साक्षात्कार में इसकी परिसमाप्ति होती है।

३२. त्याग-भाव को अपना कर आप ईश्वर के साम्राज्य में प्रवेश कर सकते हैं।
३३. जब बाह्य सुखों का परित्याग किया जाये, तो आन्तरिक सुख प्रकट होता है।

३४. त्याग का अभिमान धन के अभिमान से भी ज्यादा खतरनाक है।

३५. धर्म उस परम पुरुष के साक्षात्कार में निमित्त है, जिसे ईश्वर कहते हैं।

३६. पंचभूतों का अतिक्रमण कर आप अमर आत्मा में निवास कीजिए।

३७. विवेकी पुरुषों के अनुभव से संसार 'नश्वर' है; किन्तु सन्तों की दृष्टि में यह 'ईश्वर का ही रूप' है।

३८. मन, वचन और कर्म में साम्य लाने की कोशिश कीजिए। मन में कुछ सोचना, वचन से कुछ अन्य बात ही बोल देना और कर्म से कोई तीसरा कर्म कर गुजरना अच्छा नहीं है।

३९. सांसारिक विचारों के कुहरे से ईश्वर का स्वरूप ढका रहता है।

४०. जब विवेक का सूर्योदय होता है, तब कुहरा मिट जाता है, फिर ईश्वर का स्वरूप प्रत्यक्ष होता है।

४१. किसी साधारण स्रोत से असाधारण घटना का संचार हो जाता है।

४२. प्रत्येक सूर्योदय के साथ जीवन को नये सिरे से प्रारम्भ कीजिए।

४३. जहाँ प्रेम है, वहाँ शान्ति और सौमनस्य हैं।

४४. कामना का दूसरा नाम है दरिद्रता, अपूर्णता-यही नहीं, मृत्यु भी।

४५. ईश्वर के प्रति एकांगी प्रेम में अत्यधिक भावनाओं का पुट दीजिए।

४६. ज्ञान और अज्ञान क्रमशः पुण्य और पाप से अभिहित हैं। ४७. स्वार्थ और निःस्वार्थ क्रमशः पाप और पुण्य के पर्याय हैं।

४८. परिवर्तनशील संसार जिस परिवर्तनविहीन तत्त्व से परिचालित है, उसे परमात्मा कहते हैं।

४९. अपने विवेक-बल से व्यष्टि-चेतना को समष्टि-चेतना में समाहित कीजिए।

५०. पूर्णत्व की दिशा में प्रशस्त पथ का नाम है-धर्म ।

द्वितीय अध्याय

१. ईश्वर अपने भक्त के प्रारब्ध को अपने ऊपर ले लेता है।

२. अपनी भलाई के लिए किया गया काम 'बन्धन' है, जब कि बहुजनहिताय किया गया काम सब बन्धनों से 'मुक्ति' के लिए है।

३. कोई काम जो हम जान-बूझ कर करते हैं, अनजाने में आदतों का जनक होता है।

४. छोटे-से-छोटा भी कोई काम चरित्र पर अपना प्रभाव छोड़ता है।

५. हम जितना ही अपने पास ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव करें, उतना ही हम अपने को निर्भय अनुभव करेंगे।

६. आपका हृदय सुपावन मन्दिर है। इसमें भगवान् की प्रतिष्ठा कीजिए।

७. शान्ति और सुख केवल सत्संग के परिणाम हैं।

८. जब ईश्वर के प्रति अनुराग बढ़ता है, तब भक्त कुछ और नहीं चाहता; वह केवल ईश्वर का सान्निध्य चाहता है।

९. ईश्वर जब आप पर कृपावान् बनता है, तो अपने को आपके गुरु के रूप में प्रकट कर देता है।

१०. ईश्वर की प्रार्थना प्रारम्भ में स्वार्थ-भाव से की जाती है, लेकिन बाद में वह निःस्वार्थ बन जाती है और साधक के मन को पवित्र करती है।

११. प्रेम का पुरस्कार अथवा प्रतिशोध वह अपने में स्वयं है। १२. आत्मा और परमात्मा दोनों में कोई भेद नहीं है। १३. अतीत में किये गये पुण्य-कर्म विवेक और वैराग्य के जनक होते हैं।

१४. वासनाओं के क्षय से आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है। १५. जो 'एक' है वह सत्य है, जो 'अनेक' है वह असत्य है और बदलने वाला है।

१६. संसार के रंगमंच पर ईश्वर अभिनेता भी है और दर्शक भी। १७. आत्मा एक और अक्षय है, फिर भी

उसने अनेक नाम-रूप धारण किये हैं।

१८. ईश्वर की अभिव्यक्ति ही संसार है, वह एक से अनेक रूपों में प्रकट होता है।

१९. व्यष्टि और समष्टि में अनुस्यूत सत्ता एक ही है।

२०. आत्मा या परमात्मा साक्षी है तथा यही मन का स्वामी है।

२१. मन अनुभव करता, सोचता और वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करता है।

२२. आत्मानुशासन का बीज बोइए। उसे प्रेम के जल से साचिए। उसके चारों ओर ईश्वर के नाम की बाड़ लगा दीजिए। जो वृक्ष पनपेगा, वह अमर फल को प्रदान करेगा।

२३. साधना का उद्देश्य होना चाहिए 'अविद्या का ध्वंस'।

२४. वेदान्त कोई दार्शनिक सिद्धान्त नहीं है, यह आत्म- साक्षात्कार का क्रियात्मक रूप है।

२५. प्रेम वह सरिता है, जिसमें अवगाहन कर परम शान्ति मिलती है।

२६. मनुष्य में तीन चीजें वास करती हैं-मनुष्यता, पशुता और दिव्यता।

२७. संसार-सागर में डूबते हुए के लिए प्रार्थना ही तिनके का सहारा है।

२८. आप कभी-कभी कुछ सुनने या देखने में असमर्थ रहते हैं, कारण कि आपका मन वहाँ नहीं था। इससे स्पष्ट हो जाता है कि इन्द्रियों का कार्य-कलाप मन के संयोग से ही होता है।

२९. प्रत्येक संघर्ष से आपका कुछ-न-कुछ उद्विकास तो होता ही है।

३०. ईश्वर अनुभूतिगम्य है, जब कि ब्रह्म सकल अनुभूतियों से परे है।

३१. ईश्वर सगुण है, जब कि ब्रह्म निराकार और निर्गुण है।

३२. ईश्वर प्रेम-स्वरूप है, जब कि ब्रह्म ज्ञान-स्वरूप है।

३३. सामान्य व्यक्ति के लिए यह विश्व विविध विषयों से पूर्ण है, साधक के लिए यह भगवान् की अभिव्यक्ति है; किन्तु सन्त के लिए यह स्वयं भगवान् है।

३४. अपने हृदय को विशुद्ध करके उस एकान्त प्रकोष्ठ में ईश्वर का आवाहन कीजिए।

३५. मोमबत्ती अपने-आपको जला कर प्रकाश फैलाती है। आप भी निष्काम सेवा द्वारा अपने कुसंस्कारों को जला कर ज्ञान-रूपी प्रकाश को फैलाइए।

३६. प्रातःकाल भगवान् का नाम लेते हुए बिस्तर से उठिए, दिन-भर उसका नाम लेते हुए काम कीजिए और रात को उसका नाम ले कर ही विश्राम कीजिए।

३७. अपने जीवन को ईश्वरमय बन जाने दीजिए।

३८. इस अनन्त सृष्टि में समय का क्या मूल्य है?

३९. आत्म-निष्ठ जीवन अनन्त और अपरिसीम है।

४०. अपनी आँखें उठा कर ईश्वर की महिमा और गरिमा को देखिए।

४१. जो ईश्वर को प्राप्त कर लेता है, उसे भूख-प्यास नहीं सताती ।

४२. जीवन की सभी बुराइयों की औषधि है-प्रेम।

४३. सभी प्रकार के द्वन्द्वों से रहित जो अद्वैतावस्था है, उसे 'तुरीय' कहते हैं।

४४. अद्वैत स्वरूप का ज्ञान ही आध्यात्मिक अभ्युत्थान का चरम लक्ष्य है।

४५. आध्यात्मिक परिपूर्णावस्था में पहुँच कर अद्वैत-तत्त्व की पहचान कीजिए।

४६. एक अन्धा व्यक्ति किसी वस्तु को देख भले ही न सके, लेकिन अनुभव से उसे जान लेता है; किन्तु जो आत्मज्ञान से रहित अर्थात् अन्धे हैं, वे तो किसी वस्तु को देख कर भी उसकी परम सत्ता को नहीं पहचान पाते।

४७. मन स्वयं-प्रकाश वस्तु नहीं है। यह परम चैतन्य से अपने लिए प्रकाश माँगता है।

४८. तमोगुण को रजोगुण से जीतिए। निष्काम सेवा द्वारा रजोगुण को सत्त्व में परिणत कीजिए। आत्मज्ञान से सत्त्व का भी अतिक्रमण कर जाइए।

४९. जब साधक में सत्त्वगुण की अभिवृद्धि होने लगती है, तब उसमें दिव्यता भरने लगती है।

५०. जब मन शान्त रहता है, उसमें सत्य-तत्त्व का प्रतिबिम्ब दिखायी पड़ता है।

५१. मन एक बार में एक ही विषय का चिन्तन कर सकता है।

५२. मन को माया भी कहते हैं। यह प्रकृति का विकार है।

५३. निकृष्ट मन आपका शत्रु है, जब कि उत्कृष्ट मन आपका मित्र है।

तृतीय अध्याय

१. पीड़ा और संघर्ष के बिना तत्त्वज्ञान नहीं मिल सकता है। २. मनुष्य में एक अविनश्वर तत्त्व विद्यमान् है। वह मन, बुद्धि, शरीर या प्राण में से एक भी नहीं है। उसे जानने वाला अमर हो जाता है।

३. बुद्धि कारण शरीर का प्रतीक है।

४. अपरिसीम आनन्द का द्वार उन्मुक्त करने वाली कुंजी का नाम समाधि है।

५. निर्धनता, पवित्रता और विनम्रता को अपना कर आप अमर-पद तथा शाश्वत शान्ति को प्राप्त कर सकते हैं।

६. अग्नि के सम्पर्क से जैसे लोहा गरम और लाल हो उठता है, वैसे ही प्रकाश-पुंज आत्मा के सम्पर्क से बुद्धि भी प्रकाशमान हो उठती है।

७. बाल की खाल निकालने वाली तर्क-विधि से आप आध्यात्मिक विकास कदापि नहीं कर सकते।

८. प्रेम थोड़ा ही करें, लेकिन हमेशा करें।

९. आत्म-साक्षात्कार की कुंजी है सत्संग, द्वार है गुरु-वाक्य, मार्ग है शास्त्रोपदेश तथा निवास है उसका हृदय-मंच।

१०. अन्तःकरण की शुद्धता से पूर्णत्व-पद की भूमिका शुद्ध होती है तथा आत्म-साक्षात्कार में उसका पर्यवसान हो जाता है।

११. बार-बार अपने से प्रश्न कीजिए- 'यह जीवन क्या है? हम कहाँ से आये हैं? हमारा अन्त कहाँ है?'

१२. अमर जीवन का प्रवेश-द्वार है मृत्यु ।

१३. अन्तःकरण की शुद्धता परमानन्द-पद की जननी है।

१४. अपने आत्मा को, तथाविध संसार को, ब्रह्म का स्वरूप ही समझना चाहिए।

१५. संसार को संसार के रूप में देखें तो यह सापेक्ष सत्य है, जब कि संसार को परमार्थ के रूप में देखें तो यह सनातन कहलायेगा।

१६. यदि आपकी दृष्टि ज्ञान से सहकृत रहे, तो आप सारे संसार को ईश्वर का ही रूप समझेंगे। १७. अपनी जीवन-नय्या को इस तरह खेइए कि उसकी दिशादर्शक सूई हमेशा ईश्वर की तरफ हो।

१८. जब आप प्रार्थना करते हैं, तो हृदय को मन से और मन को वाणी से मिलाइए।

१९. अपने जीवन-पथ में ईश्वर को पथ-प्रदर्शक बनाइए। २०. जब अन्तःकरण से सभी इच्छाओं का विलय हो जाता है, तो मरणशील प्राणी अमरत्व-पद को प्राप्त करता है। हो।

२१. एक चरित्रहीन व्यक्ति वास्तव में मृत है, भले ही वह जी रहा

२२. जो ईश्वरीय शक्ति है, वह अदृश्य और व्यापक है, अमर और मौलिक है, अगम्य और त्रिगुणातीत है।

२३. प्रार्थना के बिना अन्तःकरण की शुद्धि नहीं होती, इस शुद्धि के बिना ध्यान नहीं हो सकता, ध्यान के बिना तत्त्व का साक्षात्कार सम्भव नहीं और साक्षात्कार के बिना मुक्ति नहीं प्राप्त होती।

२४. आपके जीवन का कर्तव्य होना चाहिए भगवान् की सेवा करना, उद्देश्य होना चाहिए उन्हें प्रेम करना, लक्ष्य होना चाहिए उनमें समाहित हो जाना।

२५. ब्रह्म या परमेश्वर हमारी इन्द्रियों के सम्मुख विभिन्न नाम-रूपों में प्रकट होता है।

२६. ज्ञानवान् मनुष्य की दृष्टि में संसार की सारी अनेकता सिमट कर एक परमात्म-स्वरूप हो जाती है।

२७. भगवान् का हर मन्त्र पावन आत्मिक शक्ति से परिपूरि होता है।

२८. जो ईश्वर को जानता है, वही वस्तुतः संसार को भी जानता है।

२९. व्यक्ति-चेतना ही विश्व-चेतना है। वही आप हैं। इसे जान-समझ कर मुक्ति-पद प्राप्त कीजिए।

३०. जो ईश्वर को जानने की सच्चे दिल से कोशिश करता है, उसके प्रति ईश्वर अपने स्वरूप को प्रकट भी कर देता है।

३१. अज्ञान का परदा फाड़ कर ज्ञान का दरवाजा खोलिए, फिर ब्रह्मानन्द में प्रवेश कीजिए और शाश्वत शान्ति-पद को प्राप्त कीजिए।

३२. संसार की आने-जाने वाली पद-मर्यादाओं के लिए आप क्यों प्रयास तथा संघर्ष करते हैं? आत्मज्ञान को प्राप्त करके संसार के एकछत्र अधिनायक बनिए।

३३. नैतिक पूर्णता के बाद ही आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

३४. जो सतत अन्तर्दृष्टिशील है, वह बाहरी वस्तुओं को यथार्थ में जानने वाला है।

३५. ईश्वर ने संसार की रचना क्यों की? क्योंकि यह उसका स्वभाव है।

३६. यह संसार आनन्द-स्वरूप परमात्मा की प्रतिकृति है।

३७. प्रेम में आनन्द है, शक्ति है, ईश्वर है। इसमें अमृत है।

३८. बुद्धि में प्रकाश का, मन में ग्राहिका-शक्ति का और शरीर में जीवन-संचार का कारण है आत्मा।

३९. सकल सृष्टि निरन्तर दिव्य परमात्म-स्वरूप की ओर बढ़ रही है।

४०. यह संसार ईश्वर का पाद-पीठ है।

४१. सकल संसार और उसके प्राणि-वर्ग ब्रह्म-रूपी सूत्र में पिरोये हुए हैं।

४२. विचार या अनुसन्धान उस बीज की भाँति है, जिसमें दिव्यानन्द-रूपी वृक्ष के फूटने और पनपने की सम्भावनाएँ निहित हैं।

४३. सभी दुःखों के ध्वंस का उपाय है सत्पुरुषों की संगति।

४४. अन्तःकरण की शुद्धि से पूर्णत्व-पद, ध्यान से आनन्द, आत्मानुसन्धान से ज्ञान और भक्ति से दिव्योन्माद सुलभ होता है।

४५. पूर्णता एक ही है, दो नहीं। यदि दो पूर्णताएँ हों तो एक-दूसरे को अवच्छिन्न करेंगी।

४६. ईश्वर स्वयं पूर्ण है, इसलिए वह एक है।

४७. ईश्वर की पूजा शान्ति, पवित्रता, दया और अहन्ता के फूलों से की जाती है।

४८. ईश्वर अपनी सृष्टि को उत्पन्न करता है, उसमें प्रवेश कर उसे सँभालता है और अन्त में उसे अपने में ही निहित कर लेता है।

४९. जो अपने आत्मा की अमर वाणी को सुनता है, वह अपने जीवन में भली प्रकार से जीता है।

५०. सांसारिक पदार्थों से अपना संग छोड़ कर ईश्वर में अनुराग बढ़ाइए।

५१. उस परमैश्वर्य के लिए प्रयत्न कीजिए जिसका क्षय नहीं होता।

चतुर्थ अध्याय

१.	अनधिकारी के प्रति परमार्थ सत्य की घोषणा नहीं की जाती।

२.	दीक्षा से आध्यात्मिक जीवन का श्रीगणेश होता है।

३.	प्रार्थना वह चट्टान है, जिसके सहारे डूबता हुआ मनुष्य संसार-सागर से त्राण पाता है।

४.	प्रेम में बाहरी हाव-भाव गौण होते हैं, हृदय प्रधान होता है।

५.	ईश्वर के नामोच्चारण से उनके प्रति अनुराग होता है। अनुराग से भक्ति आती है। भक्ति का रूपान्तर भाव में होता है और भाव की इतीश्री समाधि में होती है।

६.	श्रद्धा और तर्क का अविनाभाव सम्बन्ध होना चाहिए।

७.	'प्रेम' वह शासक है जो खड्ग का भय दिखा कर किसी को वश में नहीं करता। 'प्रेम' वह सूत्र है जो दीखता नहीं, पर बाँधता है जकड़ कर।

८.	साधना का तात्पर्य ईश्वर को जानना मात्र नहीं है; अपितु स्वयं को ईश्वर बना लेना है।

९.	ध्यान का चरम लक्ष्य है आत्म-साक्षात्कार।

१०.	यह संसार परब्रह्म परमात्मा का वस्तुगत रूप है।

११.	ईश्वर को आपने संसार में नहीं पाया, तो फिर हिमालय की कन्दराओं में भी नहीं पा सकते।

१२.	अपनी बहिर्मुख प्रवृत्तियों को रोकिए और उनको अन्तर्मुखी कीजिए।

१३.	जो बात आपके दिल में खटकती है, वही तो अधर्म है। १४. जो आपको सन्मार्ग से घसीट कर नीचे ले आये, वही तो अधर्म है।

१५.	परमात्म-पद को प्राप्त करने के लिए आपको सभी पार्थिव वस्तुओं का परित्याग करना पड़ेगा।

१६.	सन्तोष से बढ़ कर निधि नहीं, सत्य से बढ़ कर पुण्य नहीं, आत्मानन्द से बढ़ कर आनन्द नहीं, आत्मा से बढ़ कर अपना कोई मित्र नहीं।

१७.	दृश्य और अदृश्य जगत् का संयोजक है मानव।

१८.	जो ईश्वर का साक्षात्कार कर चुका हो, उसे भागवत कहते हैं।

१९.	प्रकृति को सजाने में ईश्वर ने अपनी कला का परिचय दिया है।

२०. वैज्ञानिक अपने आविष्कारों से संसार को जोड़ते हैं, जब कि राजनीतिज्ञ अपने कलुषित विचारों से इसे खण्ड-खण्ड करते हैं।

२१. पार्थिव सुखों से धीरे-धीरे मन को हटाइए और आत्मिक सुखों में रति कीजिए।

२२. साधु की दृष्टि में आध्यात्मिक अग्नि होती है। यह आपके पापों की भस्मीभूत कर देती है।

२३. दम्भ से मनुष्य अन्धा हो जाता है।

२४. दूसरों से व्यवहार करते हुए धैर्य का उपयोग कीजिए; किन्तु अपनी उन्नति में अधीरता बरतिए।

२५. आपके क्रमिक विकास में ईश्वर भी अनेक रूपों में आपके समक्ष प्रस्तुत होता है।

२६. इन्द्रियों के वाद्यसंकेत पर मन का भूत सांसारिक रंगमंच पर अपना नृत्य प्रस्तुत करता है।

२७. एक सन्त सबसे बड़ा योद्धा है; क्योंकि उसने कर्म के अटूट सम्बन्ध को तोड़ डाला है।

२८. सांसारिक बन्धनों की आधारभूमि है मन।

२९. आत्म-साक्षात्कार में अहंकार का विनाश सबसे पहली शर्त है।

३०. हिमालय में भाग कर नहीं, बल्कि अहंकार का नाश करके संन्यास का लक्ष्य पूरा होता है।

३१. अपने को अन्तर्मुख कीजिए। आपको अपरिसीम शक्ति के दर्शन होंगे।

३२. आपमें निहित जो ईश्वर है, वही परमार्थ सत्य है।

३३. भाव-शुद्धि, भक्ति और निर्भीकता-जैसे विचारों से अपने मन को प्रशिक्षित कीजिए।

३४. आपमें ईश्वर की अनन्त शक्ति विद्यमान है।

३५. ईश्वर के चरणों में अपनी दृष्टि जमा कर मानवता की सेवा में अपने हाथ फैलाइए।

३६. जीवन को नीरस और डरपोक बनाना आपको शोभा नहीं देता। आपको पता होना चाहिए कि आपमें सर्वशत्तिमान् सर्वज्ञ परमात्मा का निवास है।

३७. दम्भ से द्वेष का जन्म होता है। यह हत्या और प्रतिशोध में प्रेरक है।

३८. ज्ञान का लक्ष्य है मुक्ति।

३९. ज्ञान और वैराग्य आत्म-साक्षात्कार तक ले जाते हैं।

४०. संसार की अपनी गति है, अपना लय है, कारण कि इसका प्रेरक है सर्वाधिक बुद्धिमान् परमात्मा।

४१. ब्रह्म सभी प्राणियों की उत्पत्ति का पारमार्थिक स्रोत है।

४२. जब मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार का आत्मा में विलय हो जाता है, वह साधक की समाधि-अवस्था होती है।

४३. माया, ईश्वर, जीव और जगत्- ये सभी अद्वय तथा अविकारी ब्रह्म के नाना नाम-रूपादि हैं।

४४. बन्धन और मुक्ति मन में रहते हैं, आत्मा में नहीं।

४५. त्याग-वृत्ति में अपना हित-चिन्तन छोड़ देना चाहिए। यह स्वार्थपरता का विनाश है।

४६. अपना हित-चिन्तन छोड़ कर ही आत्म-निष्ठा प्राप्त की जाती है।

४७. सागर में डूबते-उतराते हुए व्यक्ति की रक्षा के लिए जैसे कहीं से अचानक नौका आ जाये, वैसे ही भव-सागर में डूबने वाले के लिए पूर्वकृत पुण्य सहायक होते हैं तथा उसे आत्म-साक्षात्कार कराते हैं।

४८. हरि का नाम स्मरण करके सभी दुःखों से मुक्ति पाइए तथा अनुभव करके उनका साक्षात्कार कीजिए। विश्वास करके निश्चय कीजिए। आत्मानुभूति प्राप्त करके दूसरों में उसका वितरण कीजिए। आगे बढ़िए-ईश्वर की ओर आगे बढ़िए।

४९. निश्चयपूर्वक विवेक कीजिए। विकासपूर्वक विस्तार कीजिए। जिज्ञासापूर्वक अनुसन्धान कीजिए।

५०. ब्रह्म एक है; किन्तु वह जीव, जगत् और ईश्वर के रूप में तीन-सा प्रतीत होता है।

५१. जब आप वास्तविक स्वरूप को पहचान लेंगे, तो ईश्वर और संसार की वास्तविकता को भी समझ लेंगे।

५२. सत्य के साक्षात्कार के बाद त्रिपुटी का लय हो जाता है।

पंचम अध्याय

१. जो उदारता के बीज बोता है, उसे दिव्य प्रेम-रूपी फल की प्राप्ति होती है।

२. भगवान् एक महान् कलाकार है। यह विश्व उसकी सर्वोत्तम कलाकृति है।

३. प्रेम दे कर व्यक्ति अपने गौरव में चार चाँद लगाता है। प्रेम ले कर कृतार्थ होता है।

४. मैत्री या दुर्भावना जो भी हम दूसरों को देते हैं, बदले में हमें वही मिलता है-यह विधि का विधान है।

५. सत्कर्म ज्ञान से उत्पन्न होते हैं।

६. सन्त उच्च स्वर में पुकार कर कहता है: 'यहाँ न दिन है न रात; यहाँ न जीव है न अजीव; यहाँ केवल तुम्हीं हो। तुम सनातन चैतन्य हो।'

७. ईश्वर का रूप चर्म-चक्षु से अगम्य है, लेकिन साधक अपनी ज्ञान-दृष्टि से उन्हें अपनी अन्तरात्मा के रूप में पहचानता है।

८. माया बड़ी रहस्यमयी है। इससे भी अधिक रहस्यमय है ब्रह्म ।

९. चित्त-शुद्धि के बिना आत्म-साक्षात्कार कभी सम्भव नहीं। चित्त-शुद्धि दैवी साम्राज्य राज-द्वार है। अपने चित्त से शुद्ध पुरुष ही भगवद्-इच्छा को पहचान सकता है।

१०. ईर्ष्या मन का पीलिया रोग है।

११. आप किस चीज के लिए सबसे अधिक लालायित हैं? शायद उस चीज के लिए जो आपको अतिशय आनन्द दे। वह प्राप्तव्य तो परमात्मा ही है।

१२. ईश्वरेच्छा के सामने प्रारब्ध कुछ नहीं कर सकता।

१३. ईश्वर जो-कुछ भी आदेश देता है, प्रकृति उसका अक्षरशः पालन करती है।

१४. अहंकार को छोड़ कर विनीतता की सीख सीखिए।

१५. मूर्तिपूजा में वर्तमान निष्ठा कालान्तर में पराभक्ति का स्वरूप ग्रहण करेगी उस ईश्वर के प्रति जिसका नाम-रूप नहीं।

१६. प्रकृति की रचना-चातुरी को देखिए। इसने संसार का अन्तर्बाह्य रूप किस तरह सजाया है। इस पर विचार करेंगे, तो ईश्वर की महिमा अपने-आप समझ में आ जायेगी।

१७. 'सन्मात्रं हि ब्रह्म' अर्थात् ब्रह्म की सत्ता सनातन है।

१८. ईश्वर के अतिरिक्त सब-कुछ नश्वर है।

१९. वह कौन-सा आनन्द है जो कभी विरस नहीं होता? वह परमात्मा है।

२०. आत्मा, पुरुष, स्वरूप, ब्रह्म, चैतन्य आदि अनेक नामों मे एक का ही अभिधान है।

२१. मन को हर तरह से अन्तर्मुख करने की कोशिश कीजिए।

२२. जब भक्ति-भाव से अन्तःकरण की शुद्धि होती है, तब निश्चय ही साधक में वैराग्य का उदय होता है।

२३. वैराग्य के बिना ध्यान कोई मतलब नहीं रखता।

२४. असत्य तपस्या के प्रभाव को नष्ट कर डालता है।

२५. परमैश्वर्य के प्रति जिज्ञासु होने के पूर्व उसमें श्रद्धा होनी चाहिए।

२६. श्रद्धा से जीवन में गति है। इसके बिना जीवन विनष्ट हो जाता है।

२७. मानव-प्रयत्न और ईश्वरीय अनुकम्पा परस्पर सम्बद्ध हैं।

२८. जो विवेकी होता है, उसे सारा संसार दुःखमय नजर आता है।

२९. वैराग्य के बिना समाधि नहीं और समाधि के बिना आत्मज्ञान नहीं होता।

३०. आपके जीवन का सुमहान् उद्देश्य यही होना चाहिए कि आप अपने अन्तरात्मा के निर्विशेष परमात्मा के साथ तादात्म्य को समझ सकें।

३१. प्रकृति सदा आपको ईश्वरीयता की ओर प्रेरणा देती है।

३२. मृत्यु के बाद देहाध्यास अपने-आप छूट जाता हो, ऐसी बात नहीं है। यह अवस्था तो जीवन-काल में ही प्राप्त करनी चाहिए।

३३. ईश्वर ने संसार की सृष्टि क्यों की? यह संसार कैसे और क्यों स्थित है? यह इसके अतिरिक्ति कुछ और क्यों नहीं है? इन सारे प्रश्नों के उत्तर अभी नहीं, बल्कि ईश्वर-साक्षात्कार के बाद ही मिलेंगे।

३४. धर्म के माध्यम से मानव दिव्यता का प्रतीक बन जाता है।

३५. अहंकार आपका शत्रु है। यदि आप विनम्रता से मैत्री गाँठ लें, तो अहंकार का दिवाला पिट जाये।

३६. यदि आपका अन्तःकरण शुद्ध हो, यदि आपमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा मात्सर्य नहीं हों, तो आप ईश्वर की इच्छा को जान सकते हैं।

३७. संसार के पदार्थ सुन्दर होते हैं; लेकिन इनसे भी अधिक सुन्दर है मन; और मन से भी अधिक सुन्दर है आत्मा।

३८. यह आत्मा सर्वथा सुन्दर है। यह सभी सौन्दयाँ का सौन्दर्य है। ३९. अन्न, प्राण, मन, विज्ञान और आनन्दमय-कोशों को पार कर साधक आत्मज्ञान की मंजिल तक पहुँचता है।

४०. इस नश्वर शरीर से अविनश्वर परमात्म-पद को प्राप्त करना ही सबका लक्ष्य होना चाहिए।

४१. सत्संग आध्यात्मिक साहचर्य है।

४२. सद्‌गुरु के प्रति आत्म-समर्पण करके आप परमात्म-पद को प्राप्त कर सकते हैं।

४३. क्रोधाग्नि में आपका वह सब-कुछ नष्ट हो जाता है जो उत्तम, सौम्य और सुन्दर है।

४४. कामनाओं के पाश को विच्छिन्न कीजिए। अपने भौतिक शरीर को अतिक्रान्त कीजिए। इस प्रकार आप ईश्वर के सुरम्य साम्राज्य में निर्भीक और स्वच्छन्द विहार कर सकते हैं।

४५. इन्द्रियानुभूति की प्रामाणिकता नहीं है। इससे उत्पन्न ज्ञान अपने-आपमें एक धोखा है।

४६. इन्द्रियों के द्वार बन्द कीजिए, मन का कपाट बन्द कीजिए, अपने अन्तस्तल में ज्ञान-दीप को प्रज्वलित कीजिए-इस तरह आप ईश्वर के सम्मुख खड़े होंगे।

४७. गंगा के प्रवाह की भाँति आपकी ध्यान-विधि अबाध चलनी चाहिए।

४८. अपना मानस-दर्पण सभी मलिनताओं से रहित कीजिए, जिससे कि वह स्थिर और अचंचल बन पाये।

४९. मन पर विजय प्राप्त करना कठिन अवश्य है, परन्तु असम्भव नहीं; इसलिए अहर्निश प्रयत्न कीजिए। निःसन्देह आपको सफलता मिलेगी।

५०. यदि आप ईश्वर से मिलना चाहते हैं, तो आपको अपने अहंकार का मूल्य चुकाना पड़ेगा।

५१. अपने अवचेतन मन के विकारों से सँभल कर रहिए। ये आपके जानी दुश्मन हैं। ये कभी भी छिप कर वार करेंगे, आपको पता भी नहीं चलेगा।

५२. ईश्वर स्वर्ग में है। ईश्वर का साम्राज्य आपके अन्दर विद्यमान है। मैं और मेरा पिता एक ही हैं। ये सब विचार बाइबिल के अनुसार आध्यात्मिक प्रगति के चिह्न हैं।

षष्ठ अध्याय

१. सत्त्व से सहयोग करें, रजस् का दमन करें तथा तमस् को नष्ट करें।

२. विवेक तथा सत्संग के अभाव tilde 4 आप भगवत्कृपा प्राप्त नहीं कर सकते।

३. अहंता और ममता ही मिल कर 'माया' कहलाती हैं। मनुष्य को भ्रम में डालने वाली यही ईश्वर की निजी शक्ति है।

४. साहस, चित्त-शुद्धि, सत्संग, हरि-भजन, करुणा, ईश्वर-पूजा आदि प्रमुख दैवी सम्पदाएँ हैं, जिनका साधक में होना अनिवार्य है।

५. ईश्वर की अनुकम्पा प्राप्त करने के लिए साधक में सच्ची लगन और निरन्तर पुरुषार्थ की आवश्यकता है।

६. सच्चाई और निष्कपटता, श्रद्धा और अभीप्सा साधक की अपरिहार्य आवश्यकताएँ हैं।

७. मन के विचारों को शान्त करके, उसे नितान्त स्वच्छ करके सिंहासन का रूप दीजिए जिस पर ईश्वर आ कर विराजमान हो सकें।

८. अज्ञान-रूपी दैत्य ने आपको दबोच रखा है, आप ज्ञान- लाभ करके अपना उद्धार कीजिए।

९. सेवा, भक्ति और ज्ञानमय जीवन ही दिव्य जीवन है।

१०. आत्मा उस सागर की भाँति है जिसका कोई कूल-किनारा नहीं है।

११. मनुष्य का ईश्वर में अभिनिवेश ही धर्म का उद्देश्य होता है।

१२. इस सृष्टि-रूपी विशाल ग्रन्थ में हमारा जीवन एक अध्याय-जैसा है।

१३. जीवन में प्रगतिशील उसे ही माना जायेगा, जिसका हृदय अत्यधिक कोमल बनता जा रहा है, जिसका रक्त उष्ण और मस्तिष्क सक्रिय होता जा रहा है; इसके अतिरिक्त जिसका आत्मा शान्ति में प्रवेश करता जा रहा है।

१४. प्रेम, विनम्रता, ध्यान और प्रार्थना के बीज बो कर क्रमशः शान्ति, सम्मान, ज्ञान और ईश्वर-अनुकम्पा की फसल काटी जाती है।

१५. न किसी वस्तु तो ठुकराना चाहिए और न किसी वस्तु के लिए तरसना चाहिए।

१६. जहाँ स्वार्थ नहीं है, वहाँ शान्ति, आनन्द और प्रकाश हैं।

१७. अपने हृदय में प्रेम की बाती जला कर सर्वत्र प्रेम का प्रकाश विकीर्ण कीजिए।

१८. ईश्वर में श्रद्धा रखने से साधक का साधना-पथ उज्ज्वल बनता है।

१९. अत्यधिक उत्कण्ठा, दृढ़ विवेक तथा निरन्तर अभ्यास ये सब द्रुत ईश्वर-साक्षात्कार में सहायक होते हैं।

२०. प्रत्येक यातना तथा कष्ट, प्रत्येक आपत्ति तथा विपत्ति शनैः-शनैः आपको भगवान् के अनुरूप ढालती है।

२१. अहंकार का नाश कीजिए; तब आप सनातन परमात्मा से एकत्व स्थापित कर सकेंगे।

२२. ध्यान अन्तरतम में प्रसुप्त दिव्यता का आह्वान है।

२३. प्रलोभन आध्यात्मिक प्रगति का परीक्षण है।

२४. तृष्णा के अभाव से आध्यात्मिक विकास परिलक्षित होता है।

२५. अपने अन्तस्तल में निहित दिव्यत्व को ध्यान के माध्यम से जगाया जाता है।

२६. साधना जीवन-भर की जानी चाहिए। आपका प्रत्येक दिन, प्रति याम और प्रत्येक क्षण साधनामय रहे। इस पथ में हजारों कठिनाइयों के बावजूद आप आगे बढ़िए। हर कदम पर ईश्वर को अपना पथ-प्रदर्शक मानिए। तब कोई कारण नहीं कि आप विघ्नों में उलझे रहें या भव-सागर न पार कर पायें।

२७. इस संसार-रूपी सागर में जीवन-रूपी नौका के खेवनहार परमात्मा हैं। उस पर आरूढ़ हो कर पार पायें और अनन्त सुख और ऐश्वर्य का आगार प्राप्त करें।

२८. चक्षु, नासिका आदि इन्द्रियाँ अनेक हैं; लेकिन प्राणवायु एक ही है, जो इन सबका नियामक है।

२९. नाम-रूप अनेक हैं; किन्तु उनमें समाविष्ट चैतन्य एक ही है।

३०. सभी ध्वनियों और शब्दों का उद्गम स्थान है ॐ।

३१. प्रार्थना वह आध्यात्मिक भोजन है, जिससे आप पुष्टि पाते हैं। इसके बिना आत्मा क्षीण होने लगता है।

३२. अपना हिस्सा दूसरों को सौंपते हुए प्रसन्नता का अनुभव कीजिए।

३३. प्रार्थना से चित्त-शुद्धि होती है। सेवा से आत्मोत्थान होता है। प्रार्थना और सेवा से क्रमशः आन्तरिक संकीर्णता मिटती है और आत्मा में उल्लास जागता है।

३४. आवागमन की अनन्त श्रृंखला में यह जीवन मामूली-सी एक कड़ी है। प्रत्येक जीवन से हम आगे एक कदम प्रगति करते हैं। ३५. प्रार्थना और ध्यान आत्मा के लिए अन्न और जल हैं।

३६. प्रार्थना के बीज बो कर उसे जप-रूपी जल से सींचिए। चित्त-शुद्धि की बाड़ लगा दीजिए तथा अशुभ वृत्ति-रूपी अनावश्यक घास-फूस को उखाड़ फेंकते रहिए। आप अमर फल को प्राप्त करेंगे।

३७. सत्संग से साधक के हृदय में प्रेरणा की अग्नि दहकती रहती है। सत्संग से आध्यात्मिक पुष्टि मिलती है। सत्संग मोक्ष का एक द्वार है।

३८. अन्धे बन कर देखिए। बहरे बन कर सुनिए। अपनी हीन मनोवृत्तियों के प्रति कम जागरूक रहिए। आप अनन्त जीवन का लाभ करेंगे।

३९. सभी सुकर्मों में उत्तम है सत्य। सभी आभूषणों में उत्तम है शान्ति। सभी वैभवों में उत्तम है आत्मज्ञान। सभी निधियों में श्रेष्ठ है त्याग।

४०. सभी क्लेशों की जननी है ममता। यह माया के प्रसूत है।

४१. जो बुद्धिमान् पुरुष सत्य का अनुकरण करता है, वह मृत्यु को परास्त कर देता है।

४२. कूटनीति उस ढकोसले का नाम है, जिसे लोग कर्तव्य समझ कर करते हैं।

४३. राजनीति धूर्तता तथा कुटिलता का शिष्ट रूप है।

४४. जो ब्रह्मज्ञानी हैं, वे ही वास्तव में शिक्षित हैं। डी. लिट्. या पी-एच. डी. उपाधि धारण करने वालों को अशिक्षित ही समझना चाहिए।

४५. अहंकार के नाश से आत्म-साक्षात्कार अपने-आप हो जाता है। ज्ञान के समागम से अज्ञान का नाश अपने-आप हो जाता है।

४६. जिस व्यक्ति में भक्ति, श्रद्धा, आत्म-संयम, सद्गुण और त्याग-भाव होते हैं, वह ईश्वर का भक्त कहलाता है।

४७. परमार्थ-सत्ता ही वास्तव में सत्ता के नाम से ज्ञातव्य है। यही परब्रह्म और परम सत्य है।

४८. करुणा दुर्बलता नहीं है। यह दैवी शक्ति है।

४९. एक महात्मा न कुछ स्वीकार करता है, न कुछ अस्वीकार करता है, न किसी वस्तु के लिए तरसता है और न किसी वस्तु का त्याग करता है।

५०. विनम्रता, त्याग-भाव और प्रार्थना की मनोवृत्तियाँ ईश्वर की कृपा से जाग्रत होती हैं।

५१. श्रद्धा, विनम्र भाव और प्रार्थना-विधि विकसित कीजिए तथा ईश्वरेच्छा पर अपने को सर्वथा छोड़ दीजिए।

सप्तम अध्याय

१. सेवा, भक्ति और ज्ञान-इन तीनों के सम्मिलित रूप का नाम है दिव्य जीवन।

२. जब निजी प्रयत्नों में ईश्वरीय अनुकम्पा का पुट हो, तब आत्म-साक्षात्कार सर्वथा सम्भव होता है।

३. ईश्वरानुकम्पा से ही दिव्य प्रेम का अभ्युदय होता है।

४. उस प्रकाश को देखिए, जिससे सारा संसार प्रकाशमान है।

५. जहाँ पूर्ण सत् और पूर्ण ज्ञान हैं, वहाँ निःसन्देह पूर्ण आनन्द का साम्राज्य है।

६. जान-बूझ कर या अनजाने-जैसे भी ईश्वर का नामोच्चारण किया जाये, वह सांसारिक पाप-तापों से मुक्ति देता है।

७. मन के प्रतिकूल चलने से संकल्प-शक्ति बढ़ती है।

८. मन की वृत्तियों को साक्षिभावेन देखते रहने से आप शान्ति-लाभ कर सकते हैं।

९. आप अविचल आत्मा से अपना सम्बन्ध स्थापित करें। तब मन की चंचल वृत्तियाँ आपका कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगी।

१०. वह कोई दिव्य शक्ति है जो मन, वचन और कर्म का रूप निर्धारित ही नहीं करती, वरन् आपके प्रारब्ध का भी निर्माण करती है।

११. आदि और अन्त तो केवल भ्रम हैं। आत्मा का न आदि है, न अन्त ।

१२. आपकी आँखों में करुणा, वाणी में माधुर्य और हाथों में कोमलता होनी चाहिए।

१३. ईश्वर की अनुकम्पा आत्म-समर्पण का फल है। ईश्वर की अनुकम्पा का एक कण अनन्त आनन्द का सागर प्रदान करता है।

१४. रजोगुण या तमोगुण से डाँवाडोल मत होइए। सत्त्व को अवधारण कीजिए। आप समाधि-लाभ करेंगे।

१५. दत्तचित्त हो कर बैठिए। पूरी तरह से शरीर को शिथिल कीजिए। नियमित रूप से ध्यान कीजिए। आप शीघ्र आत्म-साक्षात्कार करेंगे।

१६. सुख और ऐश्वर्य के मामले में असन्तोष सारी आपदाओं का मूल है। अतः जो-कुछ मिलता है, उसमें सन्तोष कर सुखी रहिए।

१७. आप सांसारिक आनन्द का जो उपभोग करते हैं, उसे धर्म के मार्ग-निर्देशन में करें।

१८. दैवी विधि-विधानों के अनुकूल ही अपने मन-बुद्धि से सम्पर्क रखिए। तभी आपका जीवन कुछ अर्थ रख पायेगा।

१९. आत्म-संयम आत्मिक विकास के लिए अपरिहार्य है।

२०. आप इस तथ्य से सहमत रहें कि ईश्वर ने अपने ही रूप में मनुष्य को अभिव्यक्त किया है। आपका कर्तव्य है कि आप अपने सच्चे स्वरूप में अवस्थित हों।

२१. जिनका चित्त प्रशान्त है, जो आत्म-संयम को धारण करते है तथा जिनके मन तथा इन्द्रियाँ भी उनके वश में होती हैं, वे अपने लक्ष्य परमात्मा का सन्धान कर पाते हैं।

२२. जो सरल चित्त हैं, ईश्वर उनके साथ चलता-फिरता है; जो नम्र हैं, ईश्वर उनके समक्ष अपना रहस्य खोल देता है; जो भद्र हैं, ईश्वर उन्हें विवेक प्रदान करता है तथा जो दम्भी हैं, ईश्वर उनसे अपना पीछा छुड़ा लेता है।

२३. प्रयत्न का नाम साधना है। इसका परिणाम सिद्धियाँ हैं; परन्तु लक्ष्य तो आत्म-साक्षात्कार है। उत्कट साधना द्वारा परमात्म-पद की प्राप्ति करनी चाहिए।

२४. जीवन के संघर्षमय पथ में उत्थान-पतन आते हैं, कभी हँसना पड़ता है, कभी रोना पड़ता है। इनसे आप उद्विग्न मत होइए। यह सोचिए कि परमात्मा अपनी कसौटी पर कस कर आपको अपने रूप के साँचे में ढालना चाहता है।

२५. आत्मा पर अविद्या का इतना गहरा आवरण है कि हम शनैः-शनैः अपने आत्मा को भूल ही चले हैं।

२६. ज्ञानार्जन द्वारा भूतप्रकृति और मनोमय जगत् से अपने को ऊपर उठाइए। ईश्वराभिमुख होइए।

२७. प्रार्थना ही सुयोग्य औषधि है, जिससे मानसिक दुर्वृत्तियों के कीटाणुओं का नाश किया जा सकता है। अतः प्रार्थना अवश्य कीजिए।

२८. जीवन की हर समस्या का समाधान है प्रेम। इससे जन-जीवन का उद्धार, प्रगति और विकास-सब-कुछ सम्भव है। २९. अध्यवसायी लोगों के साथ ईश्वर निरन्तर रहता है।

३०. ईश्वर की अनुकम्पा तभी फलीभूत होती है, जब साधक की साधना में लगन और सच्चाई होती है।

३१. आत्म-निष्ठ जीवन ही वास्तविक जीवन है। यदि आप भौतिक तत्त्व में निष्ठा रखेंगे, तो पिछड़ जायेंगे।

३२. ईश्वर का वह संसार परम रम्य है जो हमारे इर्द-गिर्द है, किन्तु वह संसार और भी अधिक रम्य है जो हमारे अन्दर विद्यमान है।

३३. जब आप ईश्वर के सम्बन्ध में सोचते हैं तो आपका शरीर, मन और अन्तस्तल रोमांचित हो उठता है। जब आप उनका नामोच्चार करते हैं, तो स्नायु-वर्ग शीतल प्रतीत होता है। जब आप उन्हें प्रेम करते हैं, तो आपमें शान्ति और आनन्द अवतरित होते हैं। जब आप उनका साक्षात्कार करते हैं, तो आपके कर्म-बन्धन समाप्त हो जाते हैं।

३४. सच्चे अर्थ में शूरवीर वही है जो काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि आन्तरिक शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर ले।

३५. यदि आप अच्छे रास्ते पर चल रहे हैं, आपका अन्तःकरण परिशुद्ध है, तो बेफिक्र हो कर घूमिए। कौन क्या कहता है, इसकी परवाह मत कीजिए।

३६. 'मेरे पास यह है यह नहीं; मैं अपूर्ण और अभावग्रस्त हूँ इत्यादि विचार तब तक आपको परेशान करेंगे, जब तक कि आप आत्म-साक्षात्कार नहीं कर लेते।

३७. सर्वतोभावेन पूर्णता का आभास तो केवल ज्ञानी को ही होता है।

३८. कृतघ्नता अपराध नहीं, पाप है।

३९. सच्चे दिल से की गयी प्रार्थना से शान्ति मिलती है।अपना भाग उदारतापूर्वक दूसरों को दे कर चित्त प्रफुल्लित होता है। निरन्तर ध्यान के अभ्यास से ब्रह्मानन्द की उपलब्धि होती है।

४०. विवेक की मशाल अपने हाथ में ले कर ध्यान के पथ पर चलिए। यदि आपका पथ-प्रदर्शक वैराग्य है, तो आपको लक्ष्य की प्राप्ति अवश्यमेव होगी।

४१. मजाक चतुराई से किया गया अपमान है।

४२. जिसने सूर्य को देखा है, वही पानी में सूर्य की परछाई देख कर कह सकता है कि यह परछाई सूर्य की है। इसी प्रकार जिसने ईश्वर को अपने अन्तःकरण में देखा है, वही बतला सकता है कि सारा संसार ईश्वर का प्रतिबिम्ब है।

४३. अहिंसा, अभय और असंग- ये तीन गुण विद्वान् के अन्दर रहते हैं।

४४. यदि आप ईश्वर-साक्षात्कार करना चाहते हैं, तो भय, घृणा और कायरता को मन से सर्वथा निकाल दीजिए।

४५. जैसे उर्वरा भूमि में बीज सरलता से अंकुरित और परिवर्धित होते हैं, वैसे ही विकारों से रहित चित्त में उत्तम विचार फूलते-फलते हैं।

४६. हमेशा समाधानपरक एवं रचनात्मक विचारों का विकास कीजिए। मामूली-सा भी बुरा विचार आपको पतन में खींच ले जायेगा।

४७. जहाँ स्वल्प भी अहंकार की भावना रही, वहाँ न श्रद्धा टिक सकती है, न भक्ति और न ज्ञान।

४८. जब घर का मालिक सोता है, तो चोरों की बन आती है। वैसे ही यदि आत्मा निद्रित हो तो काम, क्रोध, मोह, मद और मात्सर्य-रूपी चोरों की बन आती है।

४९. जब भारतवासी जलपान कर रहे होते हैं, तो आस्ट्रेलियावासी दोपहर का भोजन खा रहे होते हैं। समय तो माया का खेल है। कालातीत परब्रह्म को जानिए-समझिए।

५०. एक वृक्ष की लकड़ी से आप मकान की शहतीर बनायें या उस लकड़ी को जला कर कोयला बना डालें। आपका मन भी उसी तरह है। इसे आप आध्यात्मिक रंग में रंग लें अथवा अविद्या में पड़ा सड़ने दें।

५१. जिसने आत्म-साक्षात्कार कर लिया है, शान्ति उसी की निधि है।

५२. जो चैतन्य है, वही सत्य है। जो ब्रह्म को जान लेता है, वह ब्रह्म हो जाता है।

५३. जिस व्यक्ति के पास धन के अलावा कुछ नहीं है, वह महादरिद्र है।

५४. अपने अतीत के दुष्कर्मों पर पश्चात्ताप मत कीजिए। जो आप अब बनना चाहते हैं, वह बन कर दिखाइए।

अष्टम अध्याय

१. संसार में रहते हुए साधक का चित्त जितना ही विशाल, भावना जितनी ही निःस्वार्थ और जीवन जितना ही परहितनिरत होता है, उतना ही अधिक उसका आध्यात्मिक विकास होता है।

२. केवल सन्त ही वास्तविक सुख और सन्तोष का अनुभव करते हैं।

३. जीवन में तनाव और मतभेद अविवेक के परिणाम हैं।

४. संसार के विषय आपको नहीं बाँधते, उनके प्रति इच्छाओं से आप बन्धन महसूस करते हैं। अतः इच्छाओं का हनन कर आप सुखी होइए।

५. हमें अपनी सत्ता की जानकारी है, इसलिए हम अपनी सत्ता की घोषणा करते हैं। यदि हमारी सत्ता नहीं होती, तो हम घोषणा भी नहीं करते। इससे स्पष्ट है कि जहाँ सत्ता है, वहाँ चैतन्य भी है।

६. जितना ही अधिक निष्काम कर्म किया जाये, उतनी ही अधिक चित्त-शुद्धि प्राप्त होगी। जितनी अधिक चित्त-शुद्धि होगी, उतना ही अधिक हृदय विशाल बनेगा। जितना ही विशाल हृदय होगा, उतना ही समीप ज्योति-पुंज नजर आयेगा और वह ज्योति-पुंज जितना ही समीप होगा, मुक्ति-पद तथाविध शीघ्र प्राप्त होगा।

७. संसार में काम-काज करते हुए भी शान्त बने रहिए। बहुत सारे उत्तरदायित्वों के बीच भी अनासक्त बने रहिए। हजारों लोगों से मिलना-जुलना पड़े, फिर भी आप अपने हृदय में एकान्त का अनुभव कीजिए। भावों के उतार-चढ़ाव की अवस्था में भी सौम्य बने रहिए।

८. सुखों की अपेक्षा दुःखों को आमन्त्रित कीजिए; कारण कि दुःख में चित्त-शुद्धि की अधिक सम्भावना है, जब कि सुख में केवल बन्धन-ही-बन्धन है।

९. चेतन, अवचेतन और अचेतन मन में क्रमशः प्रारब्ध, आगामी और संचित कर्मों का भण्डार रहता है।

१०. चेतन, अवचेतन और अचेतन मन क्रमशः जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्था में सक्रिय होते हैं।

११. ममता-रूपी ईंधन अविद्या-रूपी अग्नि को प्रज्वलित करता है। ईंधन देना बन्द कर दिया जाये, तो अग्नि स्वयं बुझ जायेगी।

१२. अपनी निराशाओं और असफलताओं के लिए अपने प्रारब्ध और परमात्मा को बदनाम मत कीजिए। घोर संघर्ष द्वारा अपने मन्तव्य को प्राप्त करने की चेष्टा कीजिए।

१३. भोगों के बिना कर्मों का क्षीण होना बहुत दुष्कर है; लेकिन आप विवेक से अपना दृष्टिकोण बदल सकते हैं और उनके अच्छे-बुरे परिणामों से असम्पृक्त रह सकते हैं।

१४. एक ज्ञानी के व्यक्तित्व से पंचविध किरणें फूटती हैं-दिव्य ज्ञान, ईश्वरानुराग, विश्व-भावना, परमार्थ और चित्त की शुद्धि।

१५. ईश्वर को अपने हृदय-मंच पर विराजमान देखना, उन्हें बाह्य प्रकृति में भी परखना, अपिच समस्त प्राणियों में उन्हें अनुस्यूत समझना-यही दिव्य जीवन का सिद्धान्त है।

१६. भक्ति-भाव तथा सेवा के बिना आप करोड़ों जन्मों में भी अद्वैत-स्वरूप के साक्षात्कार की बात जबान पर नहीं ला सकते।

१७. विचार ही वाणी का रूप लेता है और कर्म का भी।

१८. सुन्दर और सौम्य विचारों को मन में स्थान दीजिए, आपकी वाणी वैसी ही बनेगी और आपके कर्म वैसे ही बनेंगे।

१९. ईश्वर को सर्वत्र विराजमान देखिए। आँखों के लिए यह उत्तम सेव्य पदार्थ है।

२०. सौम्य और सुन्दर विचारों को मन में प्रश्रय दे कर आप उत्तम रीति से देख सकते हैं, सुन सकते हैं, स्वाद ले सकते हैं और चिन्तन कर सकते हैं। २१. आत्म-निष्ठा स्व-धर्म है, जब कि शरीर, मन और बुद्धि में निष्ठावान् होना पर-धर्म है।

२२. कपड़ों का त्याग करके कोई अवधूत नहीं बनता, बल्कि मानसिक त्याग से अवधूत बनता है।

२३. अहंता और ममता के विचार जब तक आपको परेशान कर रहे हैं, आप आध्यात्मिक विकास की बात भी नहीं सोच सकते।

२४. आप इस भौतिक संसार में काल के वशवर्ती नहीं, आप तो ईश्वर के अक्षय अंश हैं। इस भावना को परिपक्व कीजिए और मुक्त हो कर विचरिए।

२५. विनम्रता और वैराग्य-ये साधक के दो चक्षु हैं। इनके बिना साधक अन्धा ही है, भले ही उसके पास और सब-कुछ हो ।

२६. मन्दिर वह सुरम्य निकेतन है जिसमें परमात्मा अपने प्रतीक रूप से विराजमान रहता है।

२७. एक ज्ञानी अथवा जीवन्मुक्त की अवस्था वर्णनातीत होती है। बाहर से इसमें सभी मानवोचित गुण हैं; किन्तु अन्दर से अतिमानव है, मानव-रूप में वह ईश्वर है।

२८. ईश्वर का स्वभाव है प्रेम। उसकी भाषा है मौन।

२९. अपनी क्षमता से अधिक देना उदारता है। अपनी आवश्यकता से अधिक लेना लोभ है।

३०. इन्द्रियों के सुख में परमानन्द की तृप्ति ढूँढना मरीचिका से प्यास बुझाने की भाँति है।

३१. हम दुःख और सुखों को अनुभव से पूर्व ही पसन्द कर लेते हैं। ३२. प्रकृति के तीनों गुणों के प्रभाव से भ्रमित मानव सब प्राणियों में अन्तर्हित उस परम श्रेष्ठ परमात्मा को नहीं पहचानता।

३३. ईश्वर की उस शक्ति का नाम माया है, जिससे एकता के स्थान में अनेकता तथा विशुद्ध चैतन्य के स्थान पर नाम-रूप नजर आते हैं।

३४. जल-प्रवाह से जैसे कीचड़ बह निकलता है, वैसे ही भक्ति-प्रवाह से अविद्या दूर हो जाती है।

३५. विचार कामनाएँ उत्पन्न करते हैं। कामनाएँ व्यक्ति को स्वार्थपूर्ण कर्म करने को प्रेरित करती हैं। कर्म से फल उत्पन्न होता है। कर्म-फल बन्धनकारक होता है। अतः विचार को नष्ट कर मोक्ष प्राप्त कीजिए।

३६. आपके सन्देह मरुमरीचिका की भाँति हैं, जब कि गुरुदेव हरिताभ भूमि सदृश हैं। आप मरुमरीचिका की ओर न जा कर हरियाली भूमि की ओर बढ़ें, आपको परम शान्ति मिलेगी।

३७. अन्तर्मुख मन 'आत्मा' ही है, जब कि बहिर्मुख मन 'संसार' है। ३८. दानशील व्यक्ति अपनी धन-सम्पदा से सुखी होता है, जब कि कंजूस व्यक्ति अपनी धन-सम्पदा से दुःख उठाता है।

३९. विनम्रता को अपना सहचर बनाइए। सारा संसार आपका मित्र बन जायेगा।

४०. पद और मर्यादा से सम्पन्न व्यक्ति में विनम्र भाव भी हो, तो यह उसका एक आभूषण है।

४१. जहाँ आत्म-विस्मृति है, वहाँ ईश्वर की अनुकम्पा बरस पड़ती है।

४२. यदि आपमें सन्तोष है, तो शान्ति के साम्राज्य में विहार कीजिए।

४३. सोना और चाँदी तो धनाभिमानी सेठों की सम्पत्ति है, जब कि ईश्वर-परायण दीन-हीनों की सम्पत्ति उनकी मानसिक शान्ति है।

४४. लोभ का तलछट पी कर मतवाले मत बनिए, अपितु भक्ति का रसास्वादन करके मतवाले बनिए।

४५. जो लोभ के चंगुल में पड़ जाते हैं, वे अपने आत्मा को नहीं पहचानते और यह सबसे बड़ी दरिद्रता है।

४६. इच्छाओं की श्रृंखला को तोड़ फेंकिए और दुःख-द्वन्द्वों से मुक्ति प्राप्त कीजिए।

४७. किसी वस्तु की प्राप्ति की आशा में जितना सुख है, उतना उस वस्तु को पाने में नहीं।

४८. ईश्वर में श्रद्धालु जन प्रार्थना द्वारा चित्त-शुद्धि प्राप्त करते हैं। ऐसे चित्त में परमात्मा की ज्योति अवतीर्ण होती है और मर्त्यधर्मा प्राणी अमरत्व प्राप्त करता है।

नवम अध्याय

१. नैतिक पूर्णता की आधारभूमि से साधक बढ़ता है। वह चित्त-शुद्धि, एकाग्रता, तत्त्व-चिन्तन, सद्विचार, ध्यान, ज्योति-दर्शन आदि विभिन्न पड़ावों को पार करता हुआ ब्रह्मानन्द-रूपी परमोच्च शिखर पर पहुँचता है। वहाँ पहुँच कर वह अमर पद को प्राप्त कर लेता है।

२. हे सत्य-पथ के धीर पथिक! शनैः-शनैः पग बढ़ाइए। आपमें धैर्य और अध्यवसाय की प्रचुरता होनी चाहिए।

३. विघ्नबाधाओं का क्या अभाव है? साधना-पथ अति दुष्कर और कठिन है, किन्तु असम्भव कदापि नहीं। अतः साहस ले कर आगे बढ़िए।

४. स्वार्थ-निष्ठा से तात्कालिक सफलता मिल जाती है; लेकिन वह स्थायी कदापि नहीं होती। सफलता के उच्च सोपान पर असफलता का एक थपेड़ा आपको नीचे धकेल देगा। अतः अच्छा है, अभी से निःस्वार्थ बनें।

५. केवल बौद्धिक पाण्डित्य से कुछ होने का नहीं। वास्तविक ज्ञान तो आध्यात्मिक विकास से ही सम्भव है।

६. वास्तविक ज्ञान वह है जिससे आप सत्यासत्य, नश्वर और अविनश्वर का भेद समझते हैं।

७. कालेज की शिक्षा अधकचरी है; क्योंकि वहाँ ज्ञान की सीमा निर्धारित रहती है। वास्तव में ज्ञान सीमाओं से परे है।

८. दर्पण पर जब तक मलिनता छायी होती है, अपना चेहरा नहीं दिखता। वैसे ही अपने हृदय के विकारों को दूर भगाया जाये, तो अन्तःकरण में आत्मा का सौन्दर्य दृष्टिगोचर हो जाता है।

९. जो संसार के बाहरी कोलाहल पर चित्त स्थापित करते हैं, वे आत्मा की मधुर वाणी को नहीं सुन पाते।

१०. यदि आप दूसरों को सुखी कर सकें, तो आपको स्वयं भी सुख प्राप्त करने का अधिकार मिले।

११. जैसे जंग लग जाने से यन्त्र बेकार हो जाता है, वैसे ही आलस्य से मन शिथिल हो जाता है।

१२. आप यात्री हैं और यह संसार एक धर्मशाला है। संसार में इस तरह रहिए जैसे आप धर्मशाला में रहते हों। यह समझ लीजिए कि यहाँ की कोई वस्तु आपकी नहीं है।

१३. जब आप मूर्ति-पूजा करते हैं, तो देव-प्रतिमा को ईश्वर की प्रतिमा के रूप में देखिए, पुनः देव-प्रतिमा में ईश्वर को विराजमान पाइए और अन्त में प्रतिमा को भूल जाइए और ईश्वर को ही स्मरण रखिए जो स्वभाव से नाम-रूपादि रहित है।

१४. स्वस्थ शरीर के संरक्षण के लिए भोजन खाया जाता है और उसे विधिपूर्वक पचाया जाता है। वैसे ही स्वस्थ मन के संरक्षण के लिए गुरु-उपदेशों का श्रवण किया जाता है और पुनः मनन द्वारा आत्मसात् किया जाता है।

१५. यदि आप शरीर और मन की उपेक्षा करें, तो आप मृत्यु को जीत सकते हैं।

१६. वैषयिक सुख की कामना व्यक्ति को संसार से बाँध रखती है। भक्ति और ज्ञान के पंख धारण कर चिरन्तन शान्ति और आनन्द के शाश्वत धाम में उड़ान लगाइए।

१७. सभी सन्त और महात्मा एक-सा ही विचार करते हैं।

१८. काल घाव को भर देता है। कार्य भी घाव को भर देता है।

१९. गुरु की ओर चुपचाप निहारते रहने से गुरु-भक्ति नहीं सिद्ध होती। अवज्ञाकारिता, अनुशासनहीनता, आत्म-वंचना और दुराग्रह भी गुरु-भक्ति में बाधक हैं।

२०. एक ज्ञानी पुरुष हाथ फैलाता है कुछ देने के लिए, जब कि एक अज्ञानी पुरुष हाथ फैलाता है कुछ लेने के लिए।

२१. उपहार का मूल्य रुपयों से नहीं आँका जाता, बल्कि उस श्रद्धा से आँका जाता है जिससे समन्वित करके इसे आपने दिया है।

२२. परोपकार करके उसे भूल जाना, सहानुभूति का प्रदर्शन, दया और दानशीलता के भाव-ये सब इष्टिकाएँ हैं जिनसे दिव्य जीवन की मंजिल खड़ी की जाती है।

२३. जो धन नष्ट हो गया हो, उसे मेहनत करके पूरा किया जा सकता है। जो ज्ञान नष्ट हो गया हो, उसे अध्ययन करके पूरा किया जा सकता है। लेकिन जो समय नष्ट हो गया हो, वह किसी भी प्रकार पूरा नहीं किया जा सकता।

२४. नदियाँ जैसे गन्दे पदार्थों को बहा ले जाती हैं, वैसे ही आप काम-क्रोधादि विकारों को बहा ले जायें, फिर भी शुद्ध रहें।

२५. आप विवेक-वृक्ष की छाया में बैठेंगे तो काम-क्रोधादि से मुक्ति मिल जायेगी।

२६. जब आप अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के पीछे भाग-भाग कर पसीने से तर हो रहे हों, अच्छा रहे आप सन्तोष के शीतल शिखर पर आरूढ़ हो जायें।

२७. सूर्य की किरणें सब पर पड़ती हैं; किन्तु चिकनी धातु पर उनका बिम्ब चमकता है। वैसे ही दिव्य ज्योति सर्वत्र विकीर्ण है; किन्तु विशुद्ध अन्तःकरण पर उसका बिम्ब पड़ता है।

२८. सूर्योदय से जैसे फूल खिल उठते हैं, वैसे ही प्रार्थना से मानवता धन्य होती है।

२९. भक्तिभावपूर्वक ईश्वर का नाम-स्मरण एक ही बार कर लिया जाये तो श्रेष्ठ है। बिखरे हुए मन से अनेक बार का स्मरण भी वृथा है।

३०. सूर्य जगत् के एक भाग से अस्त हो कर दूसरे भाग पर अवतरित होता है। वह यद्यपि हमारी आँखों से ओझल होता है, फिर भी उसकी सत्ता होती है। उसी तरह आत्मा भी शरीर से पृथक् हो कर मरता नहीं।

३१. अज्ञानी पुरुष दूसरों को सुधारने की धुन में रहता है, जब कि ज्ञानी पुरुष अपने को सुधारने की धुन में रहता है।

३२. अध्यात्म-तत्त्व की जिज्ञासा-रूपी पंख लगा कर धरती से स्वर्ग में उड़ जाइए।

३३. जैसे वर्षा का जल भूमि को बीजारोपण के उपयुक्त बनाता है, वैसे ही वैराग्य चित्त को ज्ञानोपलब्धि के लिए उपयुक्त बनाता है।

३४. बुरे विचार उस हृदय में प्रवेश नहीं कर सकते जिसके द्वार पर ईश्वरीय विचारों के पहरेदार खड़े हैं।

३५. भूखे पेट में जो पीड़ा होती है, वह खाना खा लेने पर बन्द हो जाती है। आध्यात्मिक विचारों के अभाव में जो दुःख होता है, वह आध्यात्मिक विचारों को अपने में भर लेने से दूर हो जाता है।

३६. बाहरी संघर्षों से त्राण पाने के लिए हमें आन्तरिक निर्जनता में गोता लगाना होगा।

३७. शरीर को निरोग बनाये रखने के लिए जैसे निद्रा आवश्यक है, वैसे ही आत्मा का प्रसाद-भाव बनाये रखने के लिए आन्तरिक शान्ति की आवश्यकता है।

३८. जिस व्यक्ति का अपनी जिह्वा पर नियन्त्रण है, वह किसी दुर्विजेय योद्धा से कम नहीं है।

३९. अपने हृदय-मंच से कामादि विकारों को बाहर खदेड़ दीजिए। इन्होंने बलात् वहाँ अपना राज्य कायम कर लिया है। प्रेम, चित्त-शुद्धि और शान्ति-रूपी सद्विचारों को वहाँ समासीन कीजिए जो वास्तव में राज्याधिकारी हैं।

४०. उस मन में ज्ञानोदय कभी नहीं होता जो आकांक्षाओं और आशाओं के नियन्त्रण तथा कृपा पर निर्भर करता है तथा जिसमें सन्तोष का अभाव है।

४१. मर्त्य कोश कामनाओं की तुष्टि चाहता है। वह बहिर्मुखी तथा शोर करने वाला एवं भावनाओं के अधीन है, जब कि आत्मा अनुशासन आरोपित करता है तथा अन्तर्मुखी, नीरव एवं सदा शान्तिपूर्ण है।

४२. एक सामान्य व्यक्ति विचारों का दास है, जब कि एक ज्ञानी अपने विचारों का सम्राट् है।

४३. संसार में आज विजय मिलती है तो कल पराजय भी; लेकिन एक बार भी अपने मन-बुद्धि आदि पर विजय पा लेने वाला सर्वदा के लिए विजयी हो जाता है।

४४. जो व्यक्ति सन्तुष्ट रहता है, अप्राप्त की आकांक्षा नहीं रखता, वह प्राप्त वस्तु से सर्वथा अप्रभावित रहता है तथा कभी भी उल्लास एवं नैराश्य अनुभव नहीं करता।

४५. काम करने से पूर्व सोचना बुद्धिमत्ता है। काम करते समय सोचना सतर्कता है। काम कर चुकने पर सोचना मूर्खता है।

४६. किसी व्यक्ति को बुरा नहीं कहना चाहिए। उसके अन्तर्गत सत्य-तत्त्व से उसका परिचय कराइए और उसे सहायता कीजिए कि वह उसको अभिव्यक्त कर सके।

४७. धर्म का मन्दिर करुणा, प्रेम, शुचिता और ज्ञान-रूपी चार स्तम्भों पर आधारित है। इस मन्दिर का प्रवेश-द्वार है निष्काम सेवा ।

४८. अतीत और अनागत तो स्वप्न हैं। जो वर्तमान क्षण है, वह वास्तविक है। अपने वर्तमान क्षण को दिव्य रूप दीजिए और आप परमानन्द-पद को प्राप्त करेंगे।

४९. पर-निन्दा को विषधर समझ कर छोड़ दीजिए। आप वृथा ही इसके शिकंजे में पड़ कर पछतायेंगे।

५०. जहाँ सत्य है, वहाँ वैमनस्य हो ही नहीं सकता।

५१. जो आज दुःख उठा रहे हैं, उन्हें समझना चाहिए कि यह उनके पूर्व-कर्मों का फल है। अब भी समय है कि पुण्य-कर्म करके आगामी समय में सुख-लाभ का मार्ग प्रशस्त करें।

दशम अध्याय

१.	औषधि खा कर जैसे कोई सुषुप्ति-अवस्था में चला जाता है, वैसे ही सांसारिक सुख-भोगों में लिप्त हो कर व्यक्ति अविद्या-रूपी सुषुप्ति-अवस्था में चला जाता है।

२. एकान्त में चित्त से सभी बोधगम्य पदार्थों का निराकरण कीजिए। जो बचा रहता है, वही आत्मा है।

३. संगीत का सैद्धान्तिक ज्ञान आपको संगीतज्ञ नहीं बना सकता-क्रियात्मक ज्ञान अपेक्षित है। इसी तरह आत्मा का शाब्दिक ज्ञान आपको ज्ञानी नहीं बना सकता, क्रियात्मक ज्ञान अपेक्षित है।

४. जहाँ आप आत्मा को ढूँढ़ते हैं, यद्यपि वह वहाँ विद्यमान् है, पर उसी तरह नहीं दिखता जैसे अँधेरे कमरे में वस्तुएँ नहीं दिखीं। प्रकाश के अवतरण से जैसे वस्तुएँ दिखने लगती हैं, वैसे ही ज्ञान की प्राप्ति से आत्मा का साक्षात्कार होता है।

५. बौद्धिक क्रिया-कलाप से आत्मा का साक्षात्कार नहीं होता, अपितु मन की वृत्तियों के अवरोध से होता है।

६. बौद्धिक प्रयत्नों से यदि आप आत्म-साक्षात्कार करना चाहते हैं, तो यह वैसी ही बात होगी जैसे कोई अपनी परछाई के शिरोभाग पर अपना पाँव रखना चाहे।

७. पदार्थ शाश्वत परम चैतन्य में प्रतिबिम्ब मात्र है।

८. अपने प्रशान्त मन से यदि आप अपनी दो अनुभूतियों के बीच का समय जान लें, तो आप विशुद्ध चैतन्य की एक झाँकी पा सकते हैं।

९. अपने मन की बहिर्मुख वृत्तियों का अवरोध कीजिए। बड़ी अवधानता से इनका निरीक्षण कीजिए। आप ईश्वर-साक्षात्कार कर पायेंगे।

१०. आत्मा हमारी जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति-तीनों अवस्थाओं के बीच इस तरह पिरोया हुआ है जैसे फूलों की माला में सूत्र पिरोया होता है।

११. जैसे सूर्य की किरणें अदृश्य हैं, किन्तु सब पदार्थों को प्रकाशित करती हैं, वैसे ही चैतन्य अदृश्य है, किन्तु सबका प्रकाशक है।

१२. अपनी ध्यानावस्था में जिस आनन्द की आपने उपलब्धि की है, यदि वह जागने पर विलुप्त हो जाता है तो वह पूर्ण आनन्द नहीं कहलायेगा। जो पूर्ण आनन्द है, वह सदा बना रहने वाला होता है।

१३. उपर्युक्त आनन्द की लघु छटा आपने आनन्दमय कोश के द्वारा आत्मा की अभिव्यक्ति से पायी थी।

१४. भक्ति के उदर से ज्ञान-शिशु जन्म ग्रहण करता है।

१५. धर्म, विवेक, श्रद्धा तथा यम क्रमशः मत, ज्ञान, भक्ति तथा योग के मौलिक तत्त्व हैं।

१६. जैसे हम स्वप्न-काल में उपस्थित रहते हैं और स्वप्न के अवसान पर भी, वैसे ही परमात्मा सृष्टि-काल में उपस्थित रहता है और सृष्टि के ध्वंस के उपरान्त भी।

१७. विशुद्ध चैतन्य-रूपी चित्र-पट पर अंकित चित्रावली को ही सृष्टि कहते हैं। अथवा यों समझिए कि जो विशुद्ध चैतन्य है, वह दर्पण है और उसकी छाया जो है, वह सृष्टि है।

१८. दर्पण से पृथक् प्रतिबिम्ब की कोई सत्ता नहीं, दर्पण को हटा लें तो प्रतिबिम्ब भी लुप्त हो जायेगा। वैसे ही मन के फैलाव से ही संसार का विस्तार है। मनोलय के साथ संसार अपने कारण में समा जाता है।

१९. क्योंकि ब्रह्म निरन्तर पूर्ण है, यह सृष्टि उसके बाहर कैसे हो सकती है अर्थात् यह सृष्टि भी ब्रह्म में निहित है।

२०. अपने आत्मा को भूल बैठना आत्महत्या कही जायेगी।

२१. वेदान्त, राजयोग और भक्तियोग का लक्ष्य है क्रमशः आत्म-साक्षात्कार, ईश्वर के साथ संयोग और ईश्वर में अधिवास।

२२. कुण्डलिनीयोग का लक्ष्य है शिव तथा शक्ति का सम्मिलन ।

२३. जैसे आकृतियों के आवागमन से दर्पण अछूता और अप्रभावित रहता है, वैसे ही सृष्टि के उत्थान-पतन से ब्रह्म में कोई विकार नहीं आता।

२४. आपकी आँखों के सामने से एक के बाद दूसरे दृश्य गुजरते जाते हैं और यदि आप उन दृश्यों के बीच जो खाली स्थान हैं, उन्हें देखना चाहते हैं तो आपको दृश्यों से अपनी आँखें हटा कर खाली स्थानों पर लगानी पड़ेगी। वैसे ही मन के सामने जो विषय आते-जाते है, उन सबसे हटा कर मन को जिस खाली स्थान पर टिकाया जायेगा, वही आत्मा है।

२५. दर्पण पर सम्मुख रखे हुए पदार्थ तथा रिक्त स्थान दोनों का ही प्रतिबिम्ब पड़ता है; किन्तु यदि दर्पण को विराल से आच्छादित कर दें, तो उस पर न तो पदार्थ का और न रिक्त स्थान का ही प्रतिबिम्ब पड़ेगा। तथाविधि निद्रा-काल में मन-रूपी दर्पण अज्ञान-रूपी घने विराल से आच्छादित होने के कारण न तो उसे पदार्थों का ज्ञान रहता है और न शुद्ध चैतन्य का ही।

२६. जाग्रतावस्था का वह क्षण जो विचारों से रहित होता है, समाधि से उपमेय है। लेकिन यह सेकण्ड के भी सूक्ष्मांश तक स्थिर रहता है, अतः कोई इसका ख्याल नहीं करता।

२७. मन की सीमा से बद्ध ईश्वर ही संसार है।

२८. 'जीने के लिए मरो' यह साधक का सिद्धान्त होता है, जब कि 'मरने के लिए जिओ' यह संसारी जनों का सिद्धान्त है।

२९. जैसे किरणें सूर्य से, स्फुलिंग अग्नि से और तरंग सागर से आते हैं, वैसे ही जीव ब्रह्म से प्रसूत है।

३०. जैसे आप जीवाणुओं और रक्ताणुओं को अणुवीक्षण-यन्त्र से देखते हैं वैसे ही आत्मा को सूक्ष्म बुद्धि से देखा जाता है।

३१. अभिमान, देहाध्यास, स्वार्थ और अविद्या-ये सब पाप हैं।

३२. शंका करना पाप है। ईश्वर को भुला बैठना मृत्यु है।

३३. सत्कर्म-रूपी सुन्दर फूल से आत्मज्ञान-रूपी परिपक्क फल की उत्पत्ति होती है।

३४. ईश्वर विविध भक्तों के सम्मुख उनके विकास के प्रक्रम तथा भावना के अनुरूप विविध रूपों में अपने को प्रकट करते हैं।

३५. जब मानव में पशुता का भाव विनष्ट हो जाता है, उसमें ईश्वरता जाग्रत होती है।

३६. विश्वजनीन सिद्धान्त किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं बने। यह हर व्यक्ति के साथ उतना ही पक्षपात करता है जितने का वह हकदार है।

३७. निःस्वार्थ-साधना के चतुर्दिक् ही पूर्णानन्द का निवास है। ३८. न्याय, नम्रता तथा करुणा सन्त के मौलिक गुण हैं।

३९. ईश्वर काल है। काल ईश्वर है।

४०. अकेलेपन में दुःख उठाना कहीं अच्छा है; पर बुरे के संग में रहना अच्छा नहीं।

४१. आपकी चेतना उस दिव्याग्नि की भाँति है जो आपको जलाती है जब आप बुरे कर्म करते हैं।

४२. ईश्वर और मनुष्य के बीच जो गहरी खाई है, उसे प्रार्थना से पाट दिया जाता है। ४३. अहम् चित् । त्वम् चित्। जगत् चित्। मैं परम चैतन्य हूँ, तुम परम चैतन्य हो, संसार परम चैतन्य है।

४४. जीवन में त्रुटियाँ किये बिना कोई रह नहीं सकता, अतः इसे ले कर घोर प्रायश्चित्त करने बैठ जाना बेकार है। इसे भूल जाइए। केवल जो आपके कटु अनुभव हुए हैं, 3 - 6 याद रखिए।

४५. दान प्रेम है।

४६. शरीर और मन एक विधान से शासित हैं।

४७. मनुष्य के पूर्वापर प्रारब्धों का निश्चय परमात्मा ही करता है। उसे क्रियाशील भी परमात्मा ही करता है, जब कि अज्ञानी मनुष्य सोचता है कि सब-कुछ मैं ही कर रहा हूँ।

४८. यदि आप अहंकार और सब कामनाओं से रहित हो जायें, तो फिर आपके पुनर्जन्म और पुनमृत्यु का सवाल ही नहीं पैदा होता।

४९. जीवन्मुक्त वह है जो अपने सच्चिदानन्द-स्वरूप में विश्राम करता है।

५०. मैं सर्वदा 'ज्ञाता' हूँ। मैं कदापि 'ज्ञातव्य' नहीं।

५१. आत्मा सदा ही ज्ञाता है। अतीव सूक्ष्म और असीम होने के कारण वह कभी ज्ञातव्य नहीं बन सकता।

५२. अपना देहात्म-भाव छोड़ दीजिए तथा विश्वात्म-भाव को धारण कीजिए।

५३. स्मरण करें। भगवान् को स्मरण करें। यही सर्वस्व है। इससे अधिक कुछ भी नहीं है।

५४. इस संसार में सब-कुछ दुःख-दर्द-पूर्ण और विनश्वर है, यहाँ सब-कुछ अनात्मा है, इसलिए सदा आनन्द-स्वरूप परमात्मा में निष्ठा बनाइए।

५५. जो सन्तुष्ट और परिशान्त है, वही सुखी है।

५६. सुख अन्दर से अद्भुत होता है। यह बाहर से नहीं आ सकता है।

५७. आनन्द सर्वदा अन्तरात्मा से प्रकट होता है, बाह्य पदार्थों से नहीं।

५८. आनन्द का अवतरण तब होगा जब जीव परमात्म-स्वरूप में विलीन होता है।

शान्ति के पथ पर

शान्ति समाहित चित्त की अवस्था का नाम है
शान्ति परिपूर्ण ब्रह्म है।
'अयं आत्मा शान्तः' -
यह आत्मा निरन्तर शान्त है।
जिसमें जनरव नहीं, कोलाहल नहीं-
वह शान्ति है।
यह शान्ति ही तुम्हारा अन्तर्वासी आत्मा है।
शान्ति ही तुम्हारा वास्तविक नाम है।
शान्ति से विपुल विचार-शक्ति मिलती है।
शान्ति से आत्मा अनुभूतिगम्य होता है।
शान्ति के साम्राज्य में प्रविष्ट हो कर
आत्मा परमात्मा बन जाता है।
अतः इसमें प्रवेश ले करअपने स्वरूप को परमात्म-स्वरूप में परिणत कर लो।

-स्वामी शिवानन्द